प्रस्तावना।

प्रोटेस्टेण्ट मत—अनुयायी ईसाइयों में मार्टिन लूथर का बड़ा मान है। वास्तव में धार्म्मिक पुरुषों के लिये उन का जीवन आदर्श-स्वरूप है। कोई शिक्षित पुरुष अपनी उत्कट इच्छा से कैसे महत्व के कार्य्य कर सकता है,' इस की शिक्षा लूथर की जीवनी से मिल सकती है। "न्यायात्पथ प्रविचलन्ति पदं न धीरा" इसकी ज्वलन्त उदाहरण लूथर का जीवन-चरित्र है। ऐसे कर्मवीर की जीवनी (जो कदाचित् अभी तक हिन्दी भाषा में नहीं छपी है) को हिन्दी प्रेमियों के सम्मुख उपस्थित करते हैं।

यह संक्षिप्त जीवनी है। यदि अवसर मिला तो हम इस को वृहत् रूप में लिखने का यत्न करेंगे। आशा है कि हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर हमारे उत्साह को बढ़ावेंगे।

इस में जो कुछ त्रुटियां रह गई हों उन के लिये पाठकगण! क्षमा करें। यदि कोई सज्जन हम को सूचित कर देंगे तो उन को दूसरे संस्करण में दूर करने का यत्न किया जायगा।

आगरा
१८। १। २४

निवेदक
ताराचरण अग्निहोत्री।

मार्टिन लूथर।

प्रत्येक विचारशील भारतवासी चाहता है कि हमारे देश की दशा सुधरे। इसके लिये हम को अपनी रीति भांति तथा चाल चलन में बहुत कुछ परिवर्त्तन करना होगा। बिना समाज-सुधार देशोद्धार नितान्त असम्भव है और बिना सच्चे सुधारकों के समाज-सुधार होना कठिन है। छोटे से छोटे काम के करने में भी श्रम करना पड़ता है। कोरी बातों से कभी कुछ नहीं हुआ है। जो समाज-सुधार या देशोद्धार करना चाहते हों उनको तरह तरह के कष्ट सह कर अपना कर्त्तव्य-पालन करने के लिये कटिबद्ध होना चाहिये।

समाज-सुधार कैसे हो सकता है यह बात विचारणीय है। अधिकतर अपने देश-भाई अविद्या के दासानुदास हैं। वे अपनी अज्ञानता से किसी बात में कुछ अदल बदल नहीं चाहते। जो कोई उनके आगे किसी रीति के परिवर्त्तन के लिये कहता है तो वह उसे शत्रुवत् देखते हैं। उस की हँसी उड़ाते हैं। कहीं कहीं तो ऐसे सुधारकों को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना

पड़ा है। इतिहास से पता लगता है कि सुधार की बड़ी बड़ी बातें दो चार आदमियों ने या कभी कभी एक ही मनुष्य ने चलाई हैं। पहले ही पहले जब इन सुधारकों ने अपनी जिह्वा खोली है तो इनको बहुत से लोगों ने बुरा भला कहा है। सुधारकों के दृढ़ता से अपना मत प्रचार करते रहने से कुछ साथी बन जाते है। धीरे २ ज्यों २ उन की बात का महत्व लोग समझने लगते हैं तो सारा देश उन का आदर करने लगता है। जिन को एक दिन लोग बदनाम करते थे वही एक दिन देशभक्त समझे जा कर देवतुल्य पूजित होते है। सत्य का प्रताप ही ऐसा है।

आजकल अनेक लोग देश के सुधारक बनना चाहते हैं किन्तु सुधारक और नेता बनने की योग्यता बहुत कम मनुष्यों में होती है। सुधारकों को अनेक कठिन परीक्षाओं में उत्तीर्ण होना पड़ता है। उनमे उत्तीर्ण हो कर ही कोई देश-सुधारक बन सकता है। सुधारक का सब से प्रथम गुण दृढता है। वह कहने के अनुसार करने वाला होना चाहिये। बहुधा समाज-सुधारक कहते तो यह है कि बालविवाह न करो परन्तु अपने पुत्रों और पुत्रियों का विवाह यौवनावस्था में पहुंचने से पहले ही कर डालते है। जो कहते कुछ है और करते कुछ हैं वह देश के सुधारक बनने के सर्वथा अयोग्य हैं।

देश-भक्तों और सुधारकों की सृष्टि करने का एक यह भी उपाय है कि सुलेखक किसी देश या समाज के चरित्रवान् और सुधारक पुरुषरत्नों के जीवन-चरित्र लिखें। वे ऐसी सरल भाषा और उत्तेजनापूर्ण शब्दों में होने चाहिये कि देश के नवयुवकों के हृदय पर उनका प्रभाव पड़े। अच्छी बातें देश विदेश सब स्थानों से सीखनी चाहिये। जापान ने इसही बात को अपना मूल-मन्त्र बना कर अच्छी उन्नति की है। यूरोप में लूथर भी एक सुधारक हुए हैं। यूरोप के धार्मिक जगत् में इन्होंने बड़ा परिवर्त्तन किया था। ईसाई धर्म्म की काया पलट की थी। लूथर की जीवनी हमारे लिये बहुत कुछ शिक्षाप्रद है। हाल की मनुष्य-गणना के रिपोर्ट-लेखक महाशय ने हिन्दू जाति की दशा का वर्णन करते हुए लिखा है कि हिन्दू जाति की दुर्दशा और ह्रास से बचने के लिये उसे एक लूथर जैसे महा पुरुष की बड़ी आवश्यकता है। ऐसे समय लूथर की जीवनी से हम चाहें तो कुछ न कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

उन दिनों यूरोप में ईसाई मत के नाम से बहुत से दुराचार समाज में प्रविष्ट हो रहे थे। ईसाई पुजारी लोग अपने ही को जगत्पूज्य और बड़ा बतलाते थे। वह लेटिन में पूजा पाठ और प्रार्थना करते थे। उस का

उल्था करना पाप समझा जाता था। वे अपने में अद्भुत शक्ति बतलाते थे। वे ईश्वर से पाप भी क्षमा कराते थे। यदि कोई मनुष्य पाप करता और उसे पादरियों से कह देता तो पादरी उसे पापमुक्त करते थे। वह इस बात की फीस भी लेते थे। किसी ने कोई पातक किया और पादरी से जा प्रार्थना की कि मैं ने अमुक पाप किया है। पादरी ने हुक्म दिया अच्छा बीबी मेरी की मूर्त्ति के आगे २० दीपक जला दो और ५० बार यह मन्त्र उच्चारण करो। किसी से कहा जाता था कि अच्छा जाओ अमुक तीर्थ-यात्रा कर आओ। पापी से रुपया पाने पर वह उस के लिये पाप क्षमा करने की प्रार्थना करते थे। धनाढ्य पापात्माओं से यह पाप-विमोचन के लिये खूब रुपया लेते थे। सर्व साधारण को उन्होंने विश्वास करा रक्खा था कि वे रुपया ले कर पापियों को नरक की यातना से बचा सकते हैं, नरक में गिरी हुई आत्मा का उद्धार कर सकते है। इन सब कामों के लिये वे खूब रुपया लिया करते थे। "रुपया करे स्वर्ग की राह" यह कहावत उन दिनों खूब सार्थक होती थी।

उन दिनों रोम नगर संसार में सुप्रसिद्ध था। यहां

के पादरियों ने शनै २ इतनी उन्नति की कि यहां के प्रधान पादरी ईसाई धर्म के जगद्गुरु बन बैठे। यह प्रभु ईसूमसीह के प्रतिनिधि स्वरूप समझे जाते थे और पोप या धर्म्म-पिता की उपाधि से पुकारे जाते थे। कोई दिनों तो यह गद्दी ऐसी पुजी कि यूरोप के अनेक देशों में किसी राजा महाराजा को राजसिंहासन पर बैठाना या राजगद्दी से उतार देना भी इन के बाएँ हाथ का खेल हो गया था। इन महन्तों में क्वारा रहना धर्म्म समझा जाता था। पर इस धर्म्म की आड़ में कितनी ही पाप-लीला होती थीं।

ऐसे समय में मार्टिन लूथर जर्मन के मध्य प्रान्त में १० नवम्बर सन् १४८३ ई० में उत्पन्न हुआ था। इन के माता पिता कृषिकार्य्य करते थे किन्तु दरिद्रता के कारण उन दिनों मे लकड़ी काट कर अपने गृहस्थ का निर्वाह करते थे। बचपन में लूथर का स्वभाव हठीला था। क्रोध भी जल्द आ जाता था। परन्तु माता पिता ने अपनी शिक्षा से उसको एक अच्छा लड़का बनाया। एक बार बालक मार्टिन ऐसा पीटा गया कि उस की नाक से रक्त बहने लगा। मार्टिन बहुत ही छोटी अवस्था में स्कूल भेजा गया। तब वह इतना छोटा था कि बहुधा उस का बाप उसे स्कूल को अपनी गोद ही में ले जाया करता था। उन दिनों स्कूल के

गुरु जी भी लड़कों से बड़ा कड़ा बर्ताव रखते थे। ज़रा अपराध किया कि चपत पड़ी। एक बार ज़रासी बात पर लूथर के १५ बेंत लगाये गये थे।

मार्टिन लूथर के पिता का नाम हंस लूथर था। उस ने अपने श्रम और मितव्ययिता से एक लोहा गलाने की दुकान खोली। भाग्य ने साथ दिया और उस ने अपनी बहुत कुछ प्रतिष्ठा बनाली। वह पुस्तकों का बड़ा प्रेमी और सत्संग का बड़ा उत्सुक था। पादरी और शिक्षकों को वह बहुधा अपने यहां आमन्त्रित किया करता था। बालक लूथर पर भी पिता की इन सब बातो का प्रभाव बिना पड़े न रहा। उस ने बचपन ही में मन में यह धारणा की कि मैं भी एक दिन शिक्षक बनूंगा।

जब मार्टिन लूथर १४ वर्ष का हुआ तो वह हाई स्कूल में अध्ययन के लिये भेजा गया। आत्मीय जनों से दूर होने के कारण वह अपने शिक्षकों के सम्मुख भयभीत रहा करता था। मार्टिन लूथर के पिता के और भी सन्तान थी। इन दिनों वह कठिनता से अपने गृहस्थ का निर्वाह करता था। उन दिनों जर्मनी में यह चाल थी कि दीन विद्यार्थी भिक्षा मांग मांग कर विद्याध्ययन करते थे। मार्टिन लूथर को भी ऐसा ही करना

पड़ा। लूथर गा गा कर भिक्षा मांगा करता था। लूथर का गला अच्छा था और प्रभु ईसू मसीह की लीला बड़े मधुर स्वर से वह गाता था। इस से भिक्षा सुगमता से मिल जाती थी।

लूथर के माता पिता ने अपने पुत्र की दुःखमय दशा जान कर एक और नगर में उसे भेज दिया। जिस स-म्बन्धी के भरोसे लूथर वहां भेजा गया था उसने लूथर की अधिक सहायता न की। यहां भी लूथर को उदर पोषण के लिये भजन गाकर भीख मांगनी पड़ी। एक दिन लूथर को भिक्षा मांगने मे बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। तीन घरों पर भिक्षा मांगन में भी जब उसे कुछ न मिला तो उसने निराश हो कर घर लौटना चाहा। उसने बड़े दुःख के साथ मन में सोचा कि रोटियों के पीछे मुझे अब पढ़ना छोड़ना पड़ेगा। ईश्वर भी बड़ा दीनदयालु है। सच्चे हृदय की मांग को वह सदैव पूरा करता है। लूथर यह विचार ही रहा था कि इतने मे एक द्वार खुला। यह द्वार ऐसा खुला कि जिस को लूथर जन्म भर न भूला और उसने यह सिद्धान्त निकाला कि संसार में धर्मात्मा स्त्री के हृदय की मधुरता के समान और कहीं भी मिष्टता नहीं है।

कोटा नाम की स्त्री ने अपना यह द्वार खोला था।

मार्टिन लूथर को घर में ले जा कर उसने भिक्षा-दान की। कोटा लूथर के गान और गिर्जे में उस की ईश-प्रार्थना से बड़ी प्रसन्न होती थी। कोटा से लूथर की दुर्दशा देखी न गई। उसने अपने पति से लूथर का सब वृत्तान्त कह सुनाया। एक दिन लूथर कोटा के घर आया तो गृहस्वामी भी मौजूद था। लूथर की बातों को देख सुन कर पति पत्नी बड़े प्रसन्न हुए और बालक लूथर से कहा "बेटा! अब अन्न के लिये इधर उधर कहीं भी मत जाया करो। हमारे घर में ही तुम्हारे लिये रोटी कपड़ा बहुत है।" लूथर के लिये यह बहुत अच्छा हुआ। चार वर्ष तक लूथर वहीं रह कर विद्याध्ययन करता रहा।

श्रीमती कोटा के घर रहने से लूथर के जीवन में बड़ा परिवर्त्तन हुआ। अब इसे पढ़ने लिखने और ईश्वर की भक्ति करने के लिये खूब समय मिलने लगा। इन बातों में अब उसने अच्छी उन्नति की। कोटा भी उस के सद्गुणों से बड़ी प्रसन्न थी। वह लूथर को पुत्र समान मानने लगी। लूथर ने विद्याध्ययन में अच्छी उन्नति की। अपने गुरु और साथियों से वह सम्मान प्राप्त करने लगा। गाने बजाने में भी लूथर बड़ा प्रवीण हो गया था।

१८ वर्ष की अवस्था में लूथर अरफर्ट की यूनीवर-सिटी में क़ानून का अध्ययन करने गया। लूथर का

पिता चाहता था कि मेरा पुत्र योग्य वकील बने और अच्छी तरह रुपया पैदा करे। इस विश्वविद्यालय में उस की पढाई से सब प्रोफेसर प्रसन्न हुए। लोग उसे प्रतिभाशाली होनहार युवक बताने लगे। लूथर कानून में रात दिन लगे रहने पर भी अपने धार्म्मिक कृत्यों को नही भूलता था। वह अपने अध्ययन का आधा समय ईश्वरप्रार्थना और भजन-गायन में लगाता था। उस का कथन था कि ईश्वर-आराधन द्वारा ही सच्चा अध्ययन हमे प्राप्त होता है।

सन् १५०३ ई० में जब लूथर कोई २० वर्ष का था तो उसे बाइबिल की पुस्तक का पता लगा। अपने विद्यालय के पुस्तकालय में बैठा २ वह पढ रहा था कि अचानक उसे धर्म्मपुस्तक दीख पड़ी। उस पुस्तक के देखने पर उसे बड़ा ही आनन्द प्राप्त हुआ। उस को पढने के आगे खाना पीना भी न भाता था। उस के उपदेशों से लूथर के चित्त पर अपूर्व प्रभाव पड़ा। वह बाइबिल मिल जाने के लिये ईश्वर को मन ही मन धन्यवाद दिया करता था। लूथर के जीवन में यहीं से सुधार की नीव पड़ी। लूथर के साथी उसके धार्म्मिक जीवन और धर्म्म-ग्रंथो में मग्न देख कर उस की हसी उड़ाया करते थे। वे कहते थे कि बाइबिल ने गिरजों में बड़े उत्पात कराये

हैं इसे पढ़ कर क्या करोगे? अच्छा हो जो तुम प्राचीन विद्वानो की ग्रंथावलि पढ़ा करो।

लूथर ने किसी की कोई बात न सुनी और अपने ध्यान में मग्न रहा। जब बी. ए. की परीक्षा के दिन पास आये तो उसने अतीव परिश्रम करना आरम्भ किया। परिणाम यह हुआ कि वह विषम रूप से रोगग्रस्त हुआ। उसे अपने बचने की आशा न रही। एक वृद्ध पादरी लूथर की रुग्णावस्था देख कर बड़ा दुःखित हुआ और लूथर ने उस से कहा कि अब तो मेरा इस दुनिया से चलने का समय पास आ पहुंचा है। वृद्ध ने आशीर्वाद देते हुए कहा— "नही बेटा! ऐसा नहीं होगा। ईश्वर को तुम्हारे हाथों अब ही ससार का बहुत कुछ उपकार कराना है।"

लूथर उस बीमारी से अच्छा हुआ। दैवयोग से लूथर को दूसरी विपत्ति में फँसना पड़ा। उन दिनो तलवार बांधने की चाल थी। लूथर तलवार लेकर अपने कुटुम्बियो से मिलने गया। मार्ग में तलवार म्यान मे से निकल पड़ी और लूथर का पाव कट गया। बहा खून निकला। लूथर बेहोश हो गया। अन्त में एक डाक्टर के इलाज करने से उसे आराम हुआ। लूथर ने फिर अपना अध्ययन आरम्भ किया। अपने परिश्रम और

अध्यवसाय से सन् १५०५ में लूथर एम. ए. बन गया। बड़ी धूमधाम से लूथर के इस उपाधि प्राप्त करने पर खुशी मनाई गई। बहुत से आदमी जलती मशालें ले २ कर लूथर की प्रतिष्ठा के लिये पधारे। सर्वत्र बड़ा आनन्द मनाया गया। लूथर ने अब कानून का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का दृढ विचार किया। परन्तु यह कोई नहीं जानता था कि आगे क्या होने वाला है। लूथर राजमन्त्रियों में बैठेगा या साधुजनों में।

लूथर के कालेज के सहपाठियों में अलेक्सिस (Alexis) नाम का एक नवयुवा उस का बड़ा मित्र था। एक दिन अलेक्सिस को किसी ने मार डाला। लूथर को अपने युवा मित्र की मृत्यु से बड़ा दुःख हुआ। उसने अपने मन में विचारा कि मुझे भी एक दिन मरना होगा और मित्र की तरह जब चाहूँ तब मैं मर सकता हूं। विचारने लगा कि प्राणरक्षा का क्या उपाय हो सकता है? मुझे क्या करना चाहिए? एक बार लूथर अपने पिता के घर से विद्यालय को आ रहा था कि मार्ग में बड़े जोर का तूफान आया। बादल जोर से गर्जने लगा और बिजली गगनभेदी स्वर से कड़की और लूथर के देखते २ उस के सामने की भूमि पर गिर पड़ी। लूथर ने जाना कि मेरा अन्तकाल निकट आ चुका है। लूथर ने

इस समय ईश्वर से अपनी प्राण-रक्षा की प्रार्थना की और गम्भीरता से कहा कि यदि अब मेरे प्राण बच जायंगे तो हे सर्वज्ञ ! मैं इस शरीर को तेरी सेवा में ही अर्पण करूंगा । वैसा ही हुआ । १७ जुलाई सन् १५०५ ई० को वह पादरियों के आश्रम में प्रविष्ट हुआ । लूथर का पिता इस बात को सुन कर बड़ा दुःखी हुआ । उस की सारी आशाओं पर पानी फिर गया । लूथर के मित्रों ने बहुतेरा चाहा कि वह ऐसा न करे किन्तु ईश्वर के आगे उस ने संसार की माया मोह को तुच्छ समझा ।

लूथर के मित्रों ने बहुतेरा चाहा कि वह गृहस्थ बने किन्तु लूथर ने पादरियो का आश्रम न छोड़ा । लूथर का अब नाम भी बदल गया था । अब उन्हें आगस्टाइन कहने लगे । पादरियो के आश्रम मे लूथर चले तो गये परन्तु दो चार को छोड़ शेष यहा के रहने वालों का धर्मात्मा लोगो का सा व्यवहार नही पाया । ये लोग परमार्थ की अपेक्षा अधिकतर शरीर की चिन्ता करते थे । विद्याध्ययन और मनन उन्हें बिलकुल पसंद न था । लूथर सत्सग के इच्छुक थे पर पादरियो के आश्रम में आकर भी उन्हें वह बात नही मिली जिस के लिये उन्होने अपने सांसारिक विषयो को छोड़ा था ।

जब लूथर परमार्थ-चिन्तन में निमग्न होते अथवा

उच्च विचारों को मनन करने बैठते तो आश्रम के अनेक पादरी लोग उन से कहते कोरे ईश्वर-चिन्तन में क्या है? पहले अपनी दाल रोटी की चिन्ता करो। इन लोगों के वार्त्तालाप भी तुच्छ विचारों को लिये हुए होते थे। ये अपने शरीर को भली भाँति सुखी रखना चाहते थे। अब लूथर की जरा दिनचर्य्या तो सुनिये। कालेज में कहा तो उन्हें पठन पाठन का उच्च कार्य्य करना पड़ता था और कहा अब दरवाजा खोलना, उसे बद करना, कमरों का साफ करना, गिरजा धोना आदि काम उन के सुपुर्द थे।

जब इन कामों से लूथर को फुरसत मिलती तो हुक्म दिया जाता कि "कन्धे पर धरो झोली"। जब कभी अवकाश का समय निकाल कर वह पढने बैठते तो आश्रमवासी उनसे कहते कि अभी पढने लिखने में क्या है। रोटी अंडा मछली मास और रुपया लाओ जिस से हमारे आश्रम को लाभ पहुचे। परन्तु धन्य है लूथर को! उन की धर्म्म-पिपासा ऐसी थी कि वह इन लोगों का भी कहना मान जाते और झट भीख मागने चल देते। वह आश्रम में दिन रात ईश्वर-भजन करते थे। बाइबिल जो कि रक्षित रहने के लिये एक लोहे की जंजीर से बाध दी गई थी लूथर उसे खूब पढते रहते थे। व्रत भी वह खूब करते थे। एक बार वह चार दिन तक बराबर व्रत रक्खे रहे और

सात सप्ताह तक नही सोये। यह सब काम लूथर शुद्ध मन से अपने पापो की निवृत्ति के लिये किया करते थे।

लूथर सचमुच ईश्वर के पवित्र धर्म्ममार्ग के खोजी थे। इन लोगों में रह कर भी वह आत्मोन्नति करते रहे। वह सदैव यह विचारा करते थे कि मै पापी हूं मेरी सुगति कैसे होगी। अनेक पादरियों से वह मिलते जुलते और धर्मचर्चा करते थे। हृदय की सचाई सदैव ही मनुष्य का कल्याण करती है। उन्हें एक अच्छे पादरी महात्मा के सत्संग का अवसर मिला और सच्चे धर्म्म-मार्ग पर वह चलने लगे।

दो वर्ष पीछे लूथर को पुजारी की पदवी प्राप्त हुई। उन्हों ने विचारा कि पिता के क्रोध शान्त करने का यह सुअवसर है। इस समय उन के पिता की आर्थिक दशा सुधरी हुई थी। बेटे का निमन्त्रण पा कर पिता जी आये और सब लोग मिले भेटे। लूथर के वैराग्य पर चर्चा छिड़ी। एक पादरी ने लूथर के पिता से कहा कि आप बड़े सौभाग्यशाली हैं कि आप के लूथर जैसा पुत्र हुआ जो परमार्थ के लिये अपने अनेक सासारिक स्वार्थ छोड़ बैठा। किन्तु इस लूथर ने क्रोधित हो कर कहा—"वाह साहब! वाह!! रहने भी दीजिये। क्या बाइबिल में यह नही लिखा है कि युवा पुत्र को अपने माता

पिता की सेवा करनी चाहिये।" यह सन् १५०७ ई० की बात है। कुछ भी हो लूथर ने परमार्थ-चिन्तन नहीं छोड़ा।

सन् १५०८ में उनकी विद्या बुद्धि की कीर्त्ति बहुत कुछ फैल चुकी थी। विटनवर्ग की यूनीवर्सिटी में वह फिलासोफी के प्रोफेसर नियुक्त किये गये। लूथर के कालेज में आने से बहुत से विद्यार्थी बढ़ गये। यहां भी लूथर एक छोटी सी कोठरी में रहते थे क्योंकि प्रोफेसर होने के साथ २ लूथर पादरी भी तो थे। थोड़े दिनों बाद "Bachelor in Divinity" की उपाधि प्राप्त हुई। अब वह बाइबिल भी पढ़ाने लगे। लूथर ने प्राफेसर के काम में भी अच्छा नाम पाया। विदेशों से भी विद्यार्थी उन के पास पढ़ने आने लगे। कितने ही प्राफेसर उन के लेकचर सुनने आया करते थे और उन से अपने ज्ञानभण्डार की वृद्धि करते थे। एक दिन उन के व्याख्यान को सुन कर एक विद्वान् ने कहा कि "यह लूथर ईसाई धर्म्म की बड़ी उन्नति करेगा और उस में बड़ा परिवर्त्तन लावेगा।"

लूथर से आ कर लोगों ने प्रार्थना की कि आप गिर्जे में चल कर जनसाधारण को धर्मामृतपान कराया करें। लूथर ने कहा कि मैं इस योग्य नहीं हूं। ईश्वर

विषयक जो कार्य्य आप मुझ से कराना चाहते हैं वह कोई सरल काम नहीं है। तो भी लूथर से अधिक आग्रह किया गया। लूथर ने पहिले पहिल एक छोटे से गिर्जे में व्याख्यान दिया किन्तु दिनोंदिन भीड़ बढ़ने लगी। अच्छे २ आदमी व्याख्यान सुनने आने लगे और व्याख्यान की जगह भी एक विशाल स्थान में नियत की गई। लूथर के हृदय की शुद्धता और विज्ञता उन के कथन को बड़े मार्के का बना देती थी। लूथर की प्रतिष्ठा इन दिनों खूब बढ़ गई थी।

लूथर रोम की धर्म्मपुरी के देखने की बड़ी इच्छा रखते थे। सन् १५१० में एक धार्म्मिक विवाद के निर्णय कराने के लिये लूथर पोप के पास भेजे गये। यात्रा करते २ एक दिन एक आश्रम में जा कर ठहरे। इस आश्रम में संसार के सब ही सुख प्राप्त थे। वहां के ठाठ बाट को देख कर लूथर आश्चर्य्यान्वित हो गये। भला फ़क़ीरी में ऐसी अमीरी। इन लोगों के मतानुसार शुक्रवार को मांस खाने का निषेध था परन्तु लूथर ने जब देखा कि शुक्रवार को इस का कुछ परवाह नहीं की गई तो उन से नहीं रहा गया। लूथर ने कहा कि आप लोगों को ऐसा नहीं करना चाहिये। आप धर्म्म की मर्यादा का उल्लङ्घन करते हैं। इन बातों को सुन कर

आश्रमवासी बड़े क्रोधित हुए। दरबान से कहला दिया कि "आप यहा से चुपचाप सिधारिये नहीं तो फिर ठीक न होगा"। लूथर को क्या परवाह थी तुरन्त ही वहा से चल दिये।

मार्ग में लूथर बीमार भी पड़ गये परन्तु ईश्वर की कृपा से अच्छे हो गये। इन सब बातो को देख कर भी उन की धार्म्मिकता और ईसाई मत में विश्वास की कमी नहीं हुई। अन्त में बहुत दिनों में, अनेक कष्ट सह कर, वह रोम नगर में आ पहुचे। नगर को देखते ही उन्हो ने दण्डवत् प्रणाम किया—'Holy Rome I salute thee" अर्थात् पवित्र रोम तुझ को प्रणाम है किन्तु यह धर्म्मभाव जो लूथर के हृदय में इस रोम नगर के लिये था वह रोम से चलते समय नही रहा क्योंकि रोम में ऊपरी ढकोसला बहुत निकला। लूथर ने जैसा सुन रक्खा था कि रोम के रोम रोम में धर्म्म है यह बात उसे वहा दिखाई नही दी।

लूथर ने बड़े ही भक्तिभाव से रोम में प्रवेश किया था। रोम की प्रत्येक वस्तु पर वह असाधारण प्रेम प्रदर्शित करते थे। रोम के पादरी जो बात उन को बतला देते थे वह उस पर हठात् विश्वास कर लेते थे। एक बार एक पादरी ने उन से कहा "लूथर! देखो

यह जो सोपान दृष्टिगोचर होती है यह वही सोपान है कि जिस पर से प्रभु ईशुमसीह स्वर्ग को सिधारे थे। इस का नाम पाईलेट स्टेयर (Pilate stair) है, अभी तक इस का यह प्रभाव है कि कि पोप जिस को इस पर चढ़ा देते है उस के समस्त पाप दूर हो जाते हैं और वह सीधा स्वर्ग चला जाता है।" इस बात को सुन कर लूथर गद्गद् हो गये। शरीर में रोमाञ्च हो आया। चढ़ने की प्रबल इच्छा हुई अतएव आज्ञा प्राप्त कर वह उस पर चढ़ने को चले पर उन को ऐसा भासित हुआ कि कोई अन्तरिक्ष से डाट कर कह रहा है "लूथर! तुम किस भ्रमजाल में पड़ गये। लूथर चौंक पड़े और लज्जित हो कर उस स्थान को छोड़ कर चले गये।" रोम के अविश्वास-प्रकाश में यह बीज वपन हुआ।

लूथर जब रोम को चले थे तो उन का उस पर अनन्य विश्वास था पर जब वहा से लौटे तो उन की अवस्था पूर्णतया परिवर्त्तित हो गई थी। उन्होने रोम छोड़ते समय स्वयं लिखा है कि इस घृणित रोम में कौन कौन से घृणित पापाचरण नही होते है। रोम एक भयानक नारकीय भूमि है जिस में अनेक प्रकार के पाप होते हैं।

रोम में अपना काम सम्पादन कर लूथर विटनवर्ग

लौट आये। यहां उन का एक अच्छा व्याख्यान हुआ जिसका कि प्रभाव सर्वसाधारण पर बहुत पड़ा। नगर का इलेक्टर (Elector) तो इतना मुग्ध हो गया था कि उसने अपनी मित्र-मंडली में यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि लूथर डी डी. (डाक्टर औव डिविनिटी) अर्थात् धर्माचार्य्य की उपाधि से विभूषित किये जायँ। स्टाऊपिट्ज इस प्रस्ताव को ले कर जिस आश्रम में मार्टिन उतरे थे गये और प्रस्ताव का तात्पर्य्य कह सुनाया। इतने बड़े सम्मान का प्रस्ताव सुन कर लूथर किञ्चिन्मात्र भी विचलित न हुए किन्तु शान्त भाव से यह उत्तर दिया "महाशय! आप किसी योग्य पुरुष को खोजिये, मैं इस के योग्य कदापि भी नहीं हूं।" स्टाऊपिट्ज़ ने पुन. इस पर ज़ोर देते हुए कहा ईश्वरीय धर्म्म के रक्षण निमित्त आप सरीखे महात्माओं की परमावश्यकता है। लूथर ने बहुत नाह नूह की पर अन्त में उन को यह प्रस्ताव मानना पड़ा और वह डी. डी. की उपाधि से विभूषित हुए। वह उस स्थान के धार्म्मिक वक्ता सन् १५१२ (अक्तूबर) में नियुक्त हुए। इस समय उन का काम यह था कि बाईबिल की जो बातें सत्य हैं उन का वह उपदेश करें और जो पाखण्डियों ने पाखण्ड-जाल विस्तृत कर रक्खा है उस का वह छेदन करें। लूथर

ने अपने इस काम में एक वर्ष ही में बहुत सफलता प्राप्त कर ली थी। इस समय उन के पास बड़े २ सन्त आने जाने लगे थे। उन में से एक स्पालेटिन नामक पुरुष भी था। यह मनुष्य इलेक्टर का मन्त्री तथा चैपलेन (छोटे दर्जे का पादरी) था। दोनो के एक से हार्दिक भाव होने के कारण कतिपय दिवसो में ही दोनों प्रगाढ़ मित्र हो गये। इस समय इलेक्टर एक नवीन गिरजा बनवा रहा था। इस के काम के निमित्त स्टाऊपिट्ज बाहर भेजा गया था। इस के स्थान पर लूथर को काम करना पड़ा था अतएव उन को संघों का निरीक्षण प्रत्येक दिन करना पड़ता था। इसी अवसर में अरफर्ट के संघ में मार्टिन के सिद्धान्तो की बात चीत हुई। अरफर्ट ने उन के सिद्धान्तों को ग्रहण किया। अब क्या था लूथर को अनेक साथी मिल गये। अब उन्होने अन्यान्य महन्तों को समझाना प्रारम्भ किया। थोड़े ही दिनो में इस का फल यह हुआ कि आगस्टाईन लूथर के बहुत से अनुयायी हो गये। उन के सिद्धान्तो की वृद्धि के साथ ही उन का काम भी इतना बढ़ गया था कि उन्हों ने स्वयं लिखा है कि बिना दो सहायकों के मेरा काम नही चल सकता है। इसी समय में जब कि लूथर अपने धर्म्म का झण्डा खड़ा कर रहे

थे अचानक विटन्वर्ग में महामारी फैल गई। मनुष्य पर मनुष्य मरने लगे अन्त में नागरिकों ने नगर छोड़ना प्रारम्भ किया। सब भगे पर लूथर मेरुवत् अपने स्थान पर डटे रहे। उन्हों ने उस समय अपने एक मित्र को लिखा था कि "मित्र! तुम मुझे इस दुष्काल में भागने का परामर्श देते हो पर मैं यहां से महन्तो को हटाकर स्वस्थान पर निर्भीक अटल रहूंगा। धर्म्म इस स्थान को त्याग करने का आदेश नहीं देता है कि जब तक परम-पिता परमेश्वर मुझ को नहीं बुलाता है। इस से यह मत समझो कि मुझे मृत्यु का भय नहीं है पर मुझे पूर्ण-तया भरोसा है कि वह मुझे इस भय से बचावेगा।"

लूथर वहां से चल विचल न हुए। इसने उस उन्नति-पथ को और भी सरल एव निष्कंटक कर दिया। अब उन्होंने अविश्वासो का खण्डन करना आरम्भ किया।

उस समय क्रिश्चियन धर्म्म में अनेक अयुक्त कु-विश्वास प्रचरित होरहे थे। -अन्धविश्वासो तथा शकुनों के विचारो की भरमार हो रही थी अतएव उन्होंने इनके दूर करने का उद्योग आरम्भ किया। इसके वास्ते उन्होंने इस शिक्षा का प्रचार किया कि जब मनुष्य अपने कर्म्मों के कारण फलाफल का भोक्ता है और भुगाने वाला पर-

मेश्वर है तो ऐसे कुविश्वासों की क्या आवश्यकता है ? ऐसी अवस्था में हम लोगों को पूर्व कृत पापों के लिये क्षमा मांगना उचित है और अपना धर्म्ममय जीवन बनाते हुए ईश्वर के सम्मुख धार्म्मिक बनने का प्रयत्न करें। उपर्युक्त बातों को देख लूथर ने सन् १५१६ में ९९ विषय शास्त्रार्थ निमित्त निर्द्धारित किये। इन में तत्कालीन धर्म्म सम्बन्धी भूलें भी सम्मिलित थी। सब से गुरुत्व की बात इन विषयों में यह थी कि मनुष्य स्वयम् कर्म्मों द्वारा मुक्ति का उचित पात्र बन सकता है।

इन समस्त विषयों को ले कर उन्होंने अपनी नूतन शिक्षा का प्रचार आरम्भ किया। समस्त शिक्षा का सारांश यह था:—

१ मनुष्य केवल धर्म्म-विश्वास द्वारा धार्म्मिक नही बन जाता है परन्तु जब वह धर्म्ममय हो कर धार्म्मिक कार्य करता है तभी धार्म्मिक हो सकता है।

२ जब कि हम इस बात को भले प्रकार से जानते है कि जो प्रभु ईशु मसीह में पूर्ण विश्वास रखता है उस के निमित्त कोई काम दुष्कर नही है तब यह एक मिथ्या विश्वास है कि हम सन्तों या महन्तों की सहायता के इच्छुक रहें।

इस शिक्षा ने कैथोलिक संसार में बड़ी ही खलबला-

हट मचा दी। यही शिक्षा लूथर की Reformation (सुधार) की मूल हुई।

जुलाई १५१७ में इसी शिक्षा का लूथर ने सेक्सनी के ड्यूक जार्ज की उपस्थिति में प्रचार किया। उपस्थित ड्यूक को यह शिक्षा अत्यन्त बुरी लगी। समीपस्थित एक रमणी से उसने पूछा कि यह शिक्षा कैसी है? उसने उत्तर दिया कि "यदि मैं एक बार पुन ऐसा व्याख्यानामृत पान कर सकूं तो अवश्यमेव मैं शान्ति से इस संसार से विदा हो सकूंगी।" इस उत्तर से ड्यूक के सिर पर वज्र गिरा।

दैवात् एक मास पश्चात् वही रमणी रुग्णा हुई। उसकी दशा दिन प्रतिदिन बिगड़ती ही गई। अन्त में वह मरणासन्न हुई। मृत्युकाल में लूथर की शिक्षा का आश्रय लेकर मसीह से क्षमा मांगी और शान्ति पूर्वक इस नश्वर देह को त्याग कर परलोक सिधारी।

लूथर ने यह सब कुछ किया था और पोपधर्म्म की आभ्यन्तरिक दशा का वह दिग्दर्शन कराने लगे थे पर तो भी उन के हृदय-पटल से पोप की श्रद्धा हटी नहीं थी। पोप एवं उन के धर्म्म मे अभी उन का अविश्वास नहीं हुआ था। वह केवल उनकी कुछ भूलें सर्व साधारण मे दिखला रहे थे। उस समय की अपनी दशा का

फोटो खींचते हुए वह कहते हैं कि "मैं एक धर्मान्ध पोपानुयायी था। यदि मेरे सम्मुख कोई भी पोप का अपमान करता तो कदाचित् मैं उसके प्राणों का ग्राहक हो जाता।"

लूथर का पोप के ऊपर विश्वास था नहीं पर उन्हें अब इण्डलजयस (Indulgence) अर्थात् पोप द्वारा पापों की मुक्ति का हाल सुना तो उन की श्रद्धा दूर होने लगी थी। एक दिन लूथर कहीं जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने देखा कि एक जन-समुदाय अपने किये हुए पापों का वर्णन कर रहा है और साथ ही साथ यह भी देखा कि उपस्थित जन अपने २ किये हुए घृणित एवं नीच कर्मों को मानते हुए भी कह रहे हैं कि हम को अपने पाप-कर्म छोड़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अब हम लोगों को टेटज़िल से 'इण्डलजयंस' अर्थात् पापों से मुक्ति प्राप्त हो गई है। इण्डलजयंस का नाम सुन कर लूथर को परमाश्चर्य हुआ। उन्होंने उपस्थित समुदाय से कहा "तुम एक घोर तिमिराच्छन्न कूप में पड़े हुए हो। प्रभु ईशुमसीह ने स्वयं उपदेश दिया है कि केवल पश्चात्ताप करने से ही तुम्हारे पाप दूर होंगे नहीं तो तुम सब नष्ट हो जाओगे। ऐसी अवस्था में ऐसे नास्तिक उपदेष्टा से सचेत हो जाना चाहिये।

इस समय में इन इण्डलज्यंसेज का बाजार खूब गर्म था। क्रेता तथा विक्रेताओं का अत्याधिक्य था। रोमन केथलिक मत में पापो के क्षमा कराने का विधान है। यदि किसी व्यक्ति ने कोई अपकार्य किया हो तो उस पापकर्म के लिये गिरजे में जा कर क्षमा प्रार्थना करनी पड़ती है। उस समय पाप क्षमा कराने के लिये पाद्-रियो को अच्छी रक़म देनी पड़ती थी।

सोलहवी शताब्दि के आदि भाग में दशवें पोप हुए। उस समय सेण्ट पीटर्स चर्च की दशा शोचनीय हो रही थी। पोप ने उस को सुधारने के साथ ही अति उत्तम बनाने का विचार किया। इस काम के लिये अधिक धन की आवश्यकता थी अतएव पोप ने (Indulgences) इण्डलजेन्सज़ का वेचना प्रारम्भ किया।

अब क्या था। पापलिप्त धनिको को पापमय जीवन बनाने का अच्छा सुअवसर प्राप्त हुआ। इन्द्रिय-लोलुपो की पाचों अगुली घी में हो गईं। धन के सहारे पापो का दूर होना जान कर पाप की खूब वृद्धि हुई। देश देशान्तरो में एजसियां खुल गई। जर्मन प्रदेश में जान टेटज़िल ने इण्डलजेन्सेज बिकवाने का ठेका लिया। यह टेटजिल एक पापपरायण युवा था। उस के पाजीपने के कारण सम्राट् मैक्समिलयन ने उस को बोरे में बाध

कर नदी में प्रवाह कर देने की आज्ञा निकाली थी। परन्तु इलेक्टर के कहने सुनने से सम्राट् ने उस को क्षमा प्रदान कर दी थी। इसी समय आर्कविशप क्यन्ट्ज के पास पोप का आदेश पहुँचा कि मुझे रुपयों की आवश्यकता है। तुम इण्डलजन्सज को बेच कर रुपया भेजो। क्यन्ट्ज ने टेटजिल को इस काम के लिये उचित मनुष्य समझ कर नियुक्त कर दिया।

एक दिन क्या देखा गया कि टेटज़िल साहब एक सुन्दर गाड़ी पर चढ़े चले आ रहे हैं। तीन अश्वारोही उन की गाड़ी के पीछे २ चले आ रहे हैं। साथ में एक अच्छी ख़ासी भीड़ भी थी। बाद्य का भी खूब प्रबन्ध था। चारों ओर पताकाऐं फहरा रही थी। महन्त और महन्तिनी उन की गाड़ी को घेरे हुए और प्रज्वलित मशालों को लिये हुए मन्द २ चाल से चले जा रहे थे। आबाल, वृद्ध, वनिता अपना २ काम छोड़ कर साथ जा रहे थे। इस प्रकार दम्भाडम्बर से महाशय टेटज़िल ने गिरजे में प्रवेश रक्खे। उपस्थित मनुष्यों ने भक्तिभाव प्रदर्शित करते हुए झुक २ कर अभिवादन किया। टेटज़िल भी रक्तवर्ण क्रास हाथ में लिये हुए आगे बढ़े। पुलपिट (धार्मिक मंच) के समीप पहुंचने पर वह 'क्रास' 'आल्टर' (वेदी) में गाड़ दिया गया। पश्चात् आदेश पठन प्रारम्भ किया:—

"भाइयो! ईश्वर प्रदत्त वस्तुओं में क्षमापत्र अमूल्य है। देखो! यह जो रक्तवर्ण क्रास तुम्हारे सम्मुख गड़ा हुआ है इस की उतनी ही शक्ति है जितनी कि मसीह के क्रास में शक्ति थी। इस के गुण उस से कुछ कम नहीं है। मेरे निकट आओ मैं तुम को मुद्राङ्कित पत्र दूंगा जिस के द्वारा तुम्हारे भूतकाल के पाप ही नहीं किन्तु भविष्य के पाप भी तुम को नरक की प्रचण्ड अग्नि में दग्ध नहीं कर सकेंगे। तुम्हारे पापों का इन पत्रों से ही अन्त हो जायगा। संसार में कोई ऐसा पाप नहीं है जिस को यह क्षमा-पत्र दूर न कर सकते हो। इन के गुणों का वर्णन करना मनुष्य-शक्ति से बाहर है। ये अपना प्रभाव जीवित मनुष्यों पर ही नहीं किन्तु मरे हुए जनों पर भी प्रदर्शित करते हैं। देखो! तुम्हारे पूर्वजों की आत्माएं नरक में पड़ी हुई तड़प रही हैं। जरा उन के चिल्लाने की ओर ध्यान दो। हाय २ वे कह रही हैं कि थोड़े से दान द्वारा हमारी रक्षा क्यों नहीं करते हो? हा! मुझ से अब उन का कष्ट सहन नहीं हो सकता। वह धन किस काम का जिस से हम पीड़ितों की रक्षा न कर सके। लो, अब मुझ से नहीं रहा जाता है।"

इतना कह कर टेटजिन ने कुछ सिक्के सन्दूकची में छोड़े और इस से उपरान्त पुनः व्याख्यानारम्भ किया। "अरे!

मनुष्य के स्वरूप में विवेकहीन मूढ़ पशुओ ! क्या तुम को सूझता नहीं है कि ऐसे अमूल्य रत्न को पाकर उस को लोष्ट समझ कर त्याग रहे हो। मूर्खो ! ईश्वर की इस कृपा का क्यों तिरस्कार कर रहे हो ? क्यों नहीं अपने पूर्वजों की आत्मा को शान्ति देते हो ? क्या तुम सब धन को छाती पर रख कर ले जाओगे ? तुम लोगों को चाहिये कि साधे वस्त्र भले ही धारण करो पर इस समय धन का लोभ न करो। देखो मैं स्वल्प धन-दान से ही तुम्हारे पूर्वजों को उबार सकता हूं। अब इस क्षमा-पत्र के लेने में देर न करो।

अब क्या था ! झड़ाझड़ क्षमा-पत्र बिकने लगे। क्षमा-पत्र देते समय उस ने कहा "भाइयो! पीटर और पाल ने तुम्हारे धर्म्म के लिये क्या नहीं किया। जिन्होंने अपने प्राणों की भी कुछ परवाह न कर तुम्हारे पवित्र धर्म्म की रक्षा की। हाय! आज उन्हीं के पुनीत शरीर जलोपल से दलित हो रहे हैं। क्या तुम को यह सुनते हुए आनन्द आता है कि उन के शरीर कीचड़ और धूल में पड़ कर तिरस्कृत होते रहें ? उनके शरीरों की रक्षा करना हमारा परम धर्म्म है। सेण्ट पीटर व सैण्ट पाल के चर्च भग्नावशेष हो गये हैं। उन के पुनर्निर्माण की अत्यावश्यकता है। इसी के निमित्त यह धन सञ्चय किया जा

रहा है।" धार्म्मिक ईसाइयों पर इस का प्रभाव पड़ा। अन्त में 'धन लाओ, धन लाओ, धन लाओ' कह कर टेटजिल ने अपने सदुपदेश को विराम दिया।

सन्दूकची की ओर अब मनुष्य झुके। धन डाल २ कर क्षमा-पत्र खरीदने लगे। खरीदने के समय प्रत्येक को अपने पाप वर्णित करने पड़ते थे। भिन्न २ पापों के लिये भिन्न भिन्न मूल्य थे। धनिकों को सर्वदा अधिक तथा दरिद्रों को अल्प धन देना होता था। बहुविवाह के पाप के लिये ३०) चोरी इत्यादि के लिये ४५) और किसी को मार डालने के लिये) देने पड़ते थे। इसी प्रकार से दान-भिन्नता भिन्न २ पापों पर निर्भर थी। दानोपरान्त क्षमा-पत्र प्रदान किया जाता था। क्षमा-पत्रों के भावार्थ बहुधा निम्न लिखित हुआ करते थे,—"प्रभु ईशु मसीह तेरे ऊपर कृपा कर तेरे पापों को अपनी परम पवित्र शक्ति द्वारा क्षमा करते हैं। और मैं धर्म्म-शक्ति के कारण, जो मुझ को प्रदान की गई है, तुझ को तेरे दुष्कर्मों से, जो तुझ से हुए हैं, मुक्ति देता हूं, और पापों से—नीचाति नीच—तथा घोराति घोर चाहें वे क्यों न हों-चाहे वे धर्म्माधिकारियों से ही निवृत्त किये जा सकते हों-तुझ को मुक्त करता हूं। इन कर्म्मों द्वारा जो तुझ में लज्जा एवं निर्बलता आगई है उस को भी मैं दूर करता हूं।

इस के अतिरिक्त जो तुझे अन्धकारमय नरक में कष्ट भोगने पड़ेंगे उन को भी अभी से दूर किये देता हूं। सम्प्रति मैं तुझे पुनः संस्कृत कर तेरे लिये सदा के निमित्त नरक के पट बन्द किये देता हूं और स्वर्ग का द्वार खोले देता हूं। यदि तेरा जीवन दीर्घ है तो भी यह कृपा तेरे मृत्यु-काल तक न बदलेगी।

पिता एवं पुत्र तथा पवित्र आत्मा के नाम पर—आमिन्—(अर्थात् ऐसा ही हो)

हस्ताक्षर जान टेटज़िल।

इस प्रकार से क्षमा-पत्र प्रदान कर टेटज़िल साहब ने भोले तथा पापलिप्त मनुष्यों को खूब ही ठगा। जिस सदूकची में धन सञ्चित किया जाता था उस की तीन तालियां होती थीं। एक तो टेटज़िल साहब के हाथ में, द्वितीय कोषाध्यक्ष के पास और तृतीय नगर के अधिकारी के साथ रहती थी। निश्चित दिवस पर बक्स खोला जाता था तब समस्त धन गिन कर लिख लिया जाता था और तत्पश्चात् पोप के पास भेज दिया जाता था।

यूरोप में उस समय विद्या के प्रचार की अधिकता नहीं थी। सर्वसाधारण में अविश्वासों की भरमार थी अतएव टेटज़िल को अपने मतलब गांठने का अच्छा

मौका मिला। उस समय ऐसे विद्वानो की कमी थी जो ऐसे युक्ति-विरुद्ध अविश्वासो का खण्डन करते। जब टेटजिल वहां अपना काम कर चुका तब महन्तों तथा पुरोहितो ने उस से स्वादिष्ट भोजन कराने को कहा। उन्हो ने फौरन मजूर तो कर लिया पर उस के लिये रुपया कहा से आवे क्योंकि जितना रुपया मिला था वह सब मुहर लगा कर बन्द कर दिया गया था। टेटजिल ने कुछ सोच कर दूसरे दिन गिरजे के घटे को बजवाया। घटा बजने की देरी थी कि मनुष्यों के झुण्ड के झुण्ड उस ओर दौड़ने लगे। थोड़ी ही देर में बहुत से मनुष्य वहा जमा हो गये।

जब सब जमा हो गये तब टेटजिल गिरजे से बाहर निकल कर उन से कहने लगा कि "आज प्रात काल मैं इस स्थान से जाने वाला था पर गत रात्रि को एक आश्चर्यजनक घटना हो गई है उसी के कारण आज मैं रुक गया हू।" उत्सुकता से उपस्थित समुदाय ने घटना पूछी। उस ने कहा 'जब रात्रि में मैं शयन करने के लिये शय्या पर जा लेटा तो मुझ को अचानक छत की ओर से एक करुणोत्पादक शब्द सुनाई दिया। मैं कान लगा कर उस शब्द को सुनने लगा। हाय! वह शब्द एक दु:खित आत्मा का था। उस ने मुझ को सम्बोधन-

कर के कहा "देखो मैं दुःख के कारण जीर्ण शीर्ण हो गया हूं, आप दया कर मुझे इस कष्ट से बचाइए।" उस के शब्द ऐसे करुणारस से सने हुए थे कि मैं अपने आसुओं को न रोक सका। हा! वह आत्मा इस समय किस दुरवस्था में होगी यही विचार कर मेरा हृदय फटा जाता है। आओ भाइयो! हम सब मिल कर उस की रक्षा करें। इसी कारण मैं यहां एक दिन और रुक गया हूं। आओ देर न करो, उस की रक्षा करना हम सब का परम धर्म्म है"।

टेटज़िल की इस वार्त्ता ने अपना पूर्ण प्रभाव दिखलाया। थोड़ी ही देर में एक अच्छी रक़म आ गई। फिर क्या था खूब गुलछर्रे उड़े। पर किसी ने ठीक कहा है कि 'जो धन जैसो आय है सो धन तैसो जाय'। यह लोकोक्ति टेटज़िल के विषय में ठीक चरितार्थ हुई। एक बार टेटज़िल साहब के पास एक अमीर आदमी आया उस ने टेटज़िल से यों प्रश्न करना आरम्भ किया:-

अमीर आदमी—क्या आप हम लोगों के पापो को दूर कर सकते है?

टेटज़िल—अवश्यमेव।

अमीर आदमी—सो कैसे?

टेटज़िल—पोप ने मुझे इस के लिये पूर्ण शक्ति प्रदान की है।

अमीर आदमी—तो ठीक, अच्छा यदि मेरे पाप दूर करने का पत्र आप मुझे दे देंगे तो मैं आप को १० क्राउन (एक सिक्का) दूंगा।

टेटज़िल—कहिए आप किस पाप की निवृत्ति के लिये क्षमा-पत्र चाहते है।

अमीर आदमी—मुझे एक आदमी ने एक बार सताया था पर मैं उस आदमी का नाम नहीं बतलाना चाहता हू। अब मै उस से बदला लेना चाहता हूं। उसी बदले लेने के पाप के लिये आप मुझे क्षमा-पत्र दे दें।

टेटज़िल—पत्र तो मैं दूंगा। पर क्षमा-पत्र के लिये आप को कुछ अधिक देना पड़ेगा।

अमीर आदमी—किसलिये ?

टेटजिल—बात यह है कि आप उस आदमी का नाम नहीं बतलाना चाहते हैं।

अन्त में उस अमीर आदमी ने ३० क्राउन देना मजूर किया। टेटजिल ने क्षमा-पत्र दे दिया और वह उस को ले कर चल दिया। उधर टेटजिल भी अपना सचित धन ले कर चल दिये। रास्ते में उस अमीर आदमी ने उस का समस्त धन लुटवा लिया। तब तो टेटजिल ने न्यायालय की शरण ली पर जब उसने टेट-

ज़िल के हस्तलिखित क्षमा-पत्र को पेश किया तब तो टेटज़िल साहब चुप हो गये और वह छोड़ दिया गया। सच है—'खाड़ खने जो अ न को ताको कूप तैयार'।

इन सब बातों को लूथर ने सन् १५१६ में सुना था। उस समय उसने कहा था कि यदि ईश्वर की कृपा हुई तो मैं उस की समस्त पोल खोल दूंगा। एक ओर टेटज़िल धन बटोरने में लगे हुए थे, दूसरी ओर लूथर जी खोल कर उस का प्रतिवाद कर रहे थे। जब टेटज़िल ने लूथर का हाल सुना तब वह आपे से बाहर हो गया। लूथर के प्रभावोत्पादक व्याख्यान से टेटज़िल का हृदय जलने लगा। उसने विचारा कि अब सर्वसाधारण में बिना भयोत्पादन के काम नहीं चलेगा अतएव उसने कई स्थानों पर अग्नि प्रज्वलित की। उसने कहा कि जो मनुष्य नास्तिक हैं वे यहां पोप-आज्ञा से भस्मीभूत किये जायँगे।

पर क्या ये बातें लूथर को भयभीत कर सकती थीं? कदापि नहीं। उन्हों ने अब बड़े ज़ोर से उस का मुहतोड़ खण्डन करना प्रारम्भ किया। उन का यह व्याख्यान छपा दिया गया था। इस व्याख्यान से सर्व साधारण पर बड़ा प्रभाव पड़ा। टेटज़िल ने उस व्याख्यान का प्रतिवाद किया था पर लूथर के उत्तर उसको

चुप तो कर दिया पर उसने अपना काम बन्द न किया। लूथर उस के पीछे अब पूर्णतया कटिबद्ध हो कर पड़े। सन् १५१७ की ३१ अक्तूबर की घटना है कि लूथर ने देखा कि एक जन-समुदाय गिरजे के पास खड़ा है। झट वे वहा पहुचे और क्षमा-पत्रों का ज़ोर शोर से प्रतिवाद करने लगे। उस समय उन्हो ने वहा ९५ वाक्य क्षमा-पत्रों के प्रतिवाद में टाग दिये थे। उन का नाम 'थीसिस्' है। व्याख्यान के पश्चात् उन्होने कहा जिस किसी को कुछ शङ्का-समाधान करना हो वह यहा कल उपस्थित होवे पर दूसरे दिन वहा कोई भी न आया।

इन वाक्यों ने सर्व साधारण पर बड़ा ही प्रभाव डाला। विद्युच्छक्ति से वे इतस्तत' प्रचरित होने लगे। एक ही दो मास में वे रोम तक पहुच गये। थोड़े ही दिनो में वे स्पेनिश तथा डच् 'भाषाओं' में अनुवादित हो गये। इन वाक्यो की उन दिनो खूब चर्चा फैली। एक महन्त ने उन वाक्यों को पढ कर कहा था कि इतने; दिनो के बाद मैं जैसे मनुष्य को चाहता था वैसा मिल गया। जर्मनी के सम्राट् मैक्समिलियन ने स्वय उन वाक्यो को पढा था और उन को बहुत ही प्रशसा की थी। उन्होने सैक्सनी के इलेक्टर को लिखा था कि तुम इस बात का ध्यान रक्खो कि एक दिन हम को लूथर की

आवश्यकता पड़ेगी। उस समय स्वयं पोप ने भी कहा था।—"वह एक उत्तम मनुष्य है और जो कुछ उस के प्रतिवाद में अब तक कहा गया है वह सब महन्तों की ईर्ष्या का फल है।

इन वाक्यों से लूथर ने जितनी ख्याति प्राप्त की उतना ही वह भयावस्था में आगया। विश्वविद्यालय के एक अध्यापक ने उस से कहा था "मित्र! जाओ अपनी कुटी में छिप कर बैठो, ईश्वर तुम्हारे ऊपर इस समय दया करे। उन के साथियों ने भविष्य-भय के कारण उन से उन वाक्यों के प्रचार के रोकने को कहा परन्तु लूथर ने कहा "तुम भय न करो, इन को प्रसरित होने दो"। लूथर को इस बात का ख्याल था कि मुझ को विद्वज्जनों से इस कार्य्य में पूर्ण सहायता मिलेगी पर उन की आशालता पर तुषार गिरा। कोरी बातों की सहायता देने वाले बहुत थे पर असली काम करने वालों का अभाव था अतएव लूथर ने देखा कि केवल मैं ही पोप का प्रतिवाद करनेवाला हूं। उसने देखा कि तत्कालीन समस्त क्रिश्चियन चर्च उसके विरुद्ध है। उस को ज्ञात होने लगा कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता है। इस विचार ने उन को विचलित कर दिया।

पोप के भय तथा मित्रों के निरुत्साह ने लूथर को नितान्त निरुत्साहित कर दिया। लूथर के निरुत्साह से टेटजिल ने लाभ उठाया। उसने सर्वसाधारण में नोटिस दिया कि वह लूथर के व्याख्यानो का पूर्णतया खण्डन करेगा। इस काम के लिये टेटजिल ने प्रख्यात पादरी कोनाई विम्पिना की सहायता चाही। उक्त पादरी ने भी उस को जी खोल कर सहायता दी। सन् १५१८ में लूथर और टेटज़िल के बीच में शास्त्रार्थ हुआ। इस में तीनसौ महन्त उपस्थित थे। टेटजिल ने लूथर के वाक्यो का खण्डन किया पर लूथर ने अपने वाक्यो को अकाट्य युक्तियों से समर्थन किया पर उन की वहा कुछ भी न सुनी गई। सब उपस्थित महन्त टेटजिल की ओर थे। अन्त में टेटजिल की विजय की डुगडुगी पिट गई और पादरी विम्पिना ने उस को डाक्टर की उपाधि से भूषित किया।

डाक्टर टेटज़िल ने एक फासी गाड़कर लूथर के वाक्य-पुस्तक को फासी दे दी और तत्पश्चात् उस का अग्नि-संस्कार कर दिया। चलते २ उसने कहा कि "वह (लूथर) नास्तिक भी इसी तरह जला दिया जाय तो ठीक होगा।"

लूथर के वाक्यो के खण्डन में टेटज़िल ने जो 'थिसिस्' लिखे थे उन को उसने वैक्सनी को भेजा। उन के बांटने

के लिये एक आदमी विटनवर्ग भेजा गया। वहां उसकी बड़ी दुर्गति हुई। लूथर के शिष्यों ने उस की खूब ही खबर ली। उन्होंने टेटज़िल के वाक्य-पुस्तक की भी वही अवस्था की जो स्वयं टेटज़िल ने लूथर की वाक्य-पुस्तक की की थी।

लूथर ने जब सुना कि टेटज़िल की वाक्य-पुस्तक जला दी गई तब उन को बड़ा खेद हुआ। इस कारण वे एक भयानक अवस्था में आ गये। अब प्रायः समस्त कैथलिक चर्च उन के विरुद्ध हो गया। उस समय रोम में एक सेन्सर होता था जिस का काम यह रहता था कि वह सदा पुस्तकों को देखता रहे और अपनी सम्मति प्रदान करता रहे कि अमुक पुस्तक कैथलिक चर्च वालों के पढ़ने योग्य है या नहीं। इस बार उसी सेन्सर ने एक पुस्तक लिखी जो पोप को समर्पित की गई थी। इस पुस्तक में उसने लूथर के सिद्धान्तों का जी खोल कर खण्डन किया था। इस पुस्तक को पढ़ कर लूथर ने उस का प्रतिवाद किया और आगस्टाइन के वाक्य उद्धृत करते हुए लिखा—"I have learned to render to the inspired Scripture alone the homage of a firm belief that they never erred, as to others I do not believe in the things they teach, simply because it is they who teach them."

तात्पर्य्य यह कि मैं ने केवल ईश्वरीय पुस्तक में पूर्ण विश्वास करना सीखा है क्योंकि उन में कभी भूल नहीं होती है और उन लोगों पर मेरा विश्वास नहीं है जो अपनी ही शिक्षा देते है।

सुधार का बीज उपर्युक्त वाक्य में स्थित है। सेन्सर का प्रतिवाद करते हुए लूथर ने कहा था कि "क्या तुम रक्त के प्यासे हो? यदि तुम हो तो मुझे इस की लेश-मात्र भी चिन्ता नहीं है। क्या हानि है! यदि मेरा जीवन भी नष्ट हो जाय। प्रभु ईशु मसीह मेरी सदा रक्षा करेंगे।" कोलोन के इन्क्यूजिटर (Inquisitor) ने जब इस प्रतिवाद को सुना तब उस की क्रोधाग्नि भभक उठी। उस ने अब लूथर के विषय में कहा, "चर्च के विरुद्ध इतनी साजिस काफी होचुकी है। अब ऐसे नास्तिक को एक घडी भी जीवित न रहने देना चाहिये।" ब्रैन्डबर्ग के बिशप ने भी इन्क्यूजिटर की हां में हां मिलाते हुए कहा "मुझे तब तक चैन नहीं पड़ेगा जब तक लूथर भस्मीभूत नहीं कर दिया जायगा।" इस प्रकार से लूथर पर घोर आक्रमण होने लगे। लूथर के एक प्राचीन मित्र डाक्टर यक् ने भी उन का प्रतिवाद किया था पर लूथर ने उस का भी उत्तर दिया।

सन् १५१८ के अप्रेल मास में हेडिलबर्ग में आग-

स्टाइन महन्तों की एक सभा हुई । लूथर के मित्रों ने उन को वहां जाने से रोका पर लूथर ने न माना और चलते समय कहा कि 'मैं धर्म्म में दृढ़ हूं अतएव मुझे मृत्यु का भय नही है' । जब वे वहा पहुंचे तो वहा के पाच विद्वानों ने उन की वाक्य-पुस्तक का प्रतिवाद करना प्रारम्भ किया पर लूथर ने ऐसी शान्ति तथा गम्भीरता से उत्तर दिया कि सब चकित हो गये । महन्त तो इतने प्रसन्न हुए कि उन्हों ने उन के लिए एक गाड़ी किराये कर दी जिस में बैठ कर वे अपने स्थान को गये । इसी समय पलिस्टाईन के काउयट ने इलेक्टर को लिखा था 'लूथर ने शास्त्रार्थ में जिस बुद्धिमत्ता का परिचय दिया था उस से विश्वविद्यालय का गौरव बहुत बढ़ गया है' ।

वहां से लौटने पर लूथर ने सल्यूशंस (Solutions) नाम की पुस्तक को लिखा जिस में उन्हों ने अपने 'वाक्य-पुस्तक' की व्याख्या की । इसी समय इन्हों ने पोप को एक पत्र लिखा था जिस में उन्हो ने न्याय के लिए प्रार्थना की थी परन्तु इस से उन पर उलटी आपत्ति आ गई । लूथर रोम बुलवाये गये और उन पर कैथलिक चर्च की विरोधिता का अभिशाप लगाया गया । लूथर के विरुद्ध अभियोग चलाने वाला वही सेन्सर था अतएव वह

मुद्दई बना और आश्चर्य यह कि पोप द्वारा इस मुक-द्दमे के लिये जज भी वही बनाया गया था। जिस समय लूथर ने बुलावे को सुना तो उन्हों ने कहा था कि 'वाह ! वर के बजाय वज्र गिरा'।

उन के मित्रों ने जब यह सब हाल सुना तब वे बड़े भयभीत हुए। उन्हों ने सोचा कि यदि लूथर रोम को जाते हैं तो आपत्ति में पड़ते हैं और यदि जाने से इन्कार करते हैं तब भी आपत्ति है अतएव उन लोगों ने पोप के पास एक प्रार्थना-पत्र भेजा। उसी समय कार्डि-नल कैजीटन ने जर्मनी में नास्तिकता के उच्छेद कर देने के लिए लिखा। पोप ने यह काम उन्हीं के सुपुर्द किया अतएव अब लूथर का मुकद्दमा उन्हीं के हाथ में जा पड़ा। लूथर को इस बात की पर्वाह भी न थी कि उन के ऊपर क्या आपत्ति आने वाली है। उन दिनों लूथर की प्रसन्नता और भी बढ़ गई थी जिसका कारण यह था कि उन का एक हार्दिक मित्र आ गया था जिस के कारण उनका समय बड़े ही आनन्द से व्यतीत होता था। इस मित्र का नाम 'मिलेनकथन' था।

लूथर के मित्रों ने उन को आग्सबर्ग जाने से रोका। वहाँ के काउण्ट ने एक पत्र द्वारा सूचित कर दिया था कि यहाँ के कुछ लोगों ने शपथ की है कि वे लूथर को

पाते ही उन का ख़ातमा कर देंगे। परन्तु वे बातें लूथर को न डिगा सकीं। वे अपने मत पर वैसे ही अटल रहे। उन्हों ने इलेक्टर के पास एक पत्र भेजा जिस में उन्हों ने यह लिखा था कि मेरे अगसबर्ग जाने के लिये प्रबन्ध कर दें। ७ वीं अक्टोबर को लूथर अगसबर्ग पहुंच गये। रास्ते में उन्हों ने अपने साथ लियोनार्ड नामक एक महन्त को भी ले लिया था। वहां उन्हों ने एक नवागन्तुक से मुलाक़ात की। यह नवागन्तुक इटली देश का रहने वाला था और उस का सेरालोंगा नाम था। केजीटन के पास इस ने कुछ दिनों तक नौकरी भी की थी। यह आदमी कार्डिनल का भेजा हुआ था। कार्डिनल यह चाहता था कि लूथर 'वाक्य-पुस्तक' को नष्ट कर दें। लूथर ने कहा कि यदि इस में कोई अशुद्धियां दिखला दी जायँगी तो मैं सहर्ष इस को दूर कर दूंगा। लूथर की बातों से वह प्रसन्न हो कर चला गया।

दो तीन दिन में लूथर का कार्डिनल से साक्षात्कार हुआ। साष्टाङ्ग प्रणाम कर लूथर ने कहा" मेरे ऊपर जो अभिशाप लगाये गये है उन को मैं सहर्ष सुनने को प्रस्तुत हूं'।

कार्डिनल—"अच्छा होगा कि तुम अपनी वाक्य-पुस्तक को नष्ट कर दो और इस बात की प्रतिज्ञा करो कि भविष्य में कभी ऐसा न करेंगे।"

इस पर लूथर ने पोप का पत्र देखना चाहा पर का-र्डिनल ने कहा 'बेटा! तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं की जा सकती है। तुम को अपनी भूलें स्वीकार करनी प-ड़ेगी और भविष्य में ऐसा न करना होगा।'

लूथर—"कृपा कर यह बतलाइये कि हम ने कहा २ भूल की है। यदि वे वस्तुतः भूले है तो मैं आप की शिक्षा ग्रहण करने को तैयार हू।"

कार्डिनल—"हम तुम से विवाद करना नही चाहते हैं। या तो दण्ड स्वीकार करो या पुस्तक को नष्ट करो।" लूथर ने देखा कि इस प्रकार से बात बढ जायगी अतएव वे वहा से चल पड़े। चलते समय कार्डिनल ने कहा 'यदि तुम रोम जाना चाहते हो तो मै तुम को सुरक्षित रूप से भिजवा सकता हूं।'

कार्डिनल का तात्पर्य्य इस से यह था कि वह उन को उन के शत्रुओ के हाथ में दे देवें परन्तु इसी समय लूथर का एक मित्र आ गया। उस ने लूथर से से कहा कि यह अच्छा होगा कि 'यदि तुम लेखो के द्वारा बात चीत करो। लूथर को भी यह बात पसन्द आगई। कार्डिनल ने लेख द्वारा भी वही कहा जो कुछ कि पहले कहा था। लूथर लेख पा कर एकदम चिल्ला उठा कि मै अदण्ड्य हू। उत्तर पाकर कार्डिनल बिगड़ उठा। उस

ने लिखा 'यदि तुम नहीं मानते हो तो मैं तुम्हें रोम को भेजता हूं और जातिच्युत तो मैं अभी तुम्हें किये देता हूं'। इस पर लूथर ने लिखा कि कृपा कर मेरे लेखो को पोप के पास भेज दीजिये जिस के उत्तर में उसने लिखा कि 'बस! अब हो चुका, या तो मेरी बातें मानो या अपना मुंह न दिखलाओ।' इस के पश्चात् फिर ये दोनो कभी न मिले और न कार्डिनल ने फिर कुछ लिखा। उसकी चुप्पी से लोग डर गये। अब यह सलाह ठहरी कि पोप के पास इस की अपील की जाय और आगसबर्ग फौरन छोड़ दिया जाय। लूथर ने ऐसा ही किया और वे विटनबर्ग लौट आये।

कार्डिनल ने जब सुना कि लूथर चले गये तब उस को बड़ा ही क्रोध आया। उस ने इलेक्टर को पत्र लिखा कि या तो लूथर को रोम भेज दीजिए या अपने राज्य से उस को निर्वासित कर दीजिए। इलेक्टर ने उस पत्र की एक प्रति लूथर के पास भेज दी और लूथर ने जो उत्तर दिया था वह ऐसा उत्तम था कि इलेक्टर प्रसन्न हो गये और उन्हों ने कार्डिनल की दोनो बातों को नामञ्जूर किया। थोड़े दिनो के बाद लूथर ने आगस-बर्ग में जो कुछ हुआ था उसे छपवा दिया। नहीं मालूम क्यों, पोप की पालिसी एकाएक बदल गई। उन्हों ने

लूथर से सुलह करनी विचारी। इस हठात् परिवर्त्तन से सब को आश्चर्य्य हुआ। पोप ने मिल्टिटिज नामक एक मनुष्य को स्वर्ण-गुलाब के सहित इलेक्टर के पास भेजा और उस से वहां का गुप्त भेद भी लेने को कह दिया। लूथर ने भी इस मनुष्य के आने का हाल सुना। लूथर के मित्रों ने उन को बहुत समझ बूझ कर रहने को कहा क्योंकि उन को इस बात की शङ्का थी कि वह लूथर को पकड़ कर पोप के हवाले कर देगा परन्तु लूथर ने तब भी कहा 'मैं ईश्वर की इच्छा पर निर्भर रहूंगा'।

बिचारे इलेक्टर बड़ी आपत्ति में पड़े। न तो वह इतने शक्तिशाली चर्च के विरुद्ध जा सकते थे और न लूथर को ही छोड़ना चाहते थे अतएव उन्होंने यह विचारा कि जब तक यह मामला शान्त न हो जाय यह अच्छा होगा कि लूथर गुप्तभाव से रहें। सन् १५१९ में सम्राट् मैक्समिलियन का प्राणान्त हो गया अतएव वहां का शासन इलेक्टर के हाथ में आ पड़ा। मिल-टिटिज ने लूथर से मुलाकात की और कहा 'क्या तुम जानते हो कि तुम ने क्या कर डाला है?' लूथर ने कहा 'नहीं'। तब तो उस ने कहा कि 'तुम ने सब को अपनी ओर कर लिया है। ऐसी अवस्था में यदि पोप तुम्हारे ऊपर चढ़ाई भी करे तो वह तुम्हारा कुछ भी नहीं

बिगाड़ सकते हैं अतएव तुम अब ऐसा काम करो जिस से ये सब झगड़े शान्त हो जाय"। लूथर इस बात के लिए तैयार थे पर वे अपने नवीन धर्म्म का विरोध नहीं कर सकते थे। तब यह विचारा गया कि कोई आर्क-बिशप जिसको लूथर पसन्द करें पञ्च नियुक्त किये जाय। लूथर इस बात पर राज़ी हो गये। इधर डाक्टर टेट-ज़िल पर ग़बन का मुकद्दमा चलाया गया जिस में यह साबित किया गया कि उन्हों ने क्षमा-पत्रों को बेच कर जो रुपिया पैदा किया था उस का बहुत बड़ा भाग वह स्वयं हड़प गया है। इस अभियोग का उस के ऊपर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा। भय के कारण वह बहुत दिन न जी सका। उस की मृत्यु के समय लूथर ने करुणा-रस-युक्त एक पत्र उस को लिखा था।

जब आर्कबिशप ने देखा कि लूथर अपनी बात पर अड़े है तो उन्हो ने इलेक्टर को लूथर के भेज देने के लिये लिखा परन्तु इलेक्टर ने साफ़ नाही कर दी। लूथर का प्रभाव प्रति दिन बढ़ रहा था अतएव बहुत से महन्तों को यह असह्य हो उठा। लूथर के ऊपर वाक्-प्रहार होने लगे। उन्ही दिनो में डाक्टर यक् ने आ कर लूथर को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा पर लूथर ने कहा कि इलेक्टर ने आज कल मुझ को शास्त्रार्थ करने से रोक

रक्खा है। तब तो यक् ने कहा कि "इलेक्टर आज्ञा दे दें तब तो तुम राजी हो"। इस पर लूथर ने कहा "बस उन की आज्ञा ले लो और मैं तैयार हूं"। यक् ने इलेक्टर की आज्ञा ले ली और शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। बीस दिन तक शास्त्रार्थ हुआ पर कुछ फल न निकला। उभय-पक्ष वाले अपने २ को विजेता बतलाने लगे पर अन्त में लूथर की ही विजय ठहरी। यक् के साथियों ने उन का साथ छोड़ना प्रारम्भ किया और लूथर के अनुयायी बनने लगे।

अब यक् लूथर के घोर विद्वेषी होगये। सन् १५२० में वह रोम को गये और वहां जाकर लोगों को उभाड़ना शुरू किया। इधर चार्ल्स जर्मनी के सम्राट् हुए। उनकी निगाह लूथर के ऊपर अच्छी न थी। लूथर की अवस्था भयानक होने लगी। एक दिन लूथर कहीं जा रहे थे इतने में एक युवा ने उन पर पिस्तौल तान कर कहा "तुम अकेले कैसे घूम रहे हो?" इस पर लूथर ने कहा "मनुष्य मेरा क्या कर सकता है, जब मेरा रक्षक परमेश्वर है।" इस उत्तर को सुन कर वह चल दिया। सीरालोगा ने इलेक्टर को लिखा कि 'आप लूथर की रक्षा करने से हाथ खींच लीजिए जिस से हम लोगों को १०००० क्राउन मिलने का अवसर मिले'। लूथर को ऐसी अवस्था

में देख कर उनके मित्रों ने उन को लिखा "आपका जीवन सङ्कट में है अतएव आप इन लोगों के पास आजाइये जिस से हम लोग आपकी रक्षा कर सकें।" इस पर लूथर ने उत्तर दिया "ईश्वर चाहेगा तो तुम को इस बात की आवश्यकता नही पड़ेगी।"

सन् १५२० में उन्होने सुधार के ऊपर एक और पुस्तक लिखी। इस में रोम की कुरीतिया दिखलाते हुए उन्होने महन्तों की दुर्दशा दिखलाई थी। इस पुस्तक की खूब बिक्री हुई। रोम में यक् ने भी इस का हाल सुना। ज़ोर लगा कर उन्होने लूथर पर अभियोग चलवा दिया। लूथर के पास पोप का 'बुल' (मुद्राङ्कितपत्र) आया। इस में लूथर पर जो अभिशाप लगाये गये थे उनका वर्णन था। 'बुल' को लेकर स्वयं यक् जर्मनी में आये थे। जर्मनी में इस 'बुल' का निरादर हुआ। जब लूथर ने इस का हाल सुना तब उन्होंने कहा था कि ऐसा काम यक् ही को शोभा देता है। यक के अनुयायिओ ने अग्नि प्रज्वलित कर लूथर की पुस्तको को जलाना शुरू किया पर लूथर पर इस का प्रभाव कुछ भी न पड़ा। उन्होने प्रत्यक्ष रूप से पोप पर आक्रमण करना प्रारम्भ किया। बहुत जल्द इस की खबर जर्मनी भर में फैल गई। एक दिन छात्रों ने अग्नि प्रज्वलित की जिस में

लूथर ने पहिले पोप के शास्त्र तथा यक् के ग्रन्थ फेंक दिये और तत्पश्चात् 'बुल' को भी अग्नि में समर्पित कर दिया। इस प्रकार से लूथर ने अपने को 'रोमन चर्च' से पृथक् कर दिया। उन का पोप से खुल्लमखुल्ला युद्ध छिड़ गया।

पोप ने लूथर को जातिच्युत कर दिया था। जातिच्युति की आज्ञा का उल्लंघन करने पर मृत्यु-दण्ड दिया जाता था। लूथर ने जब यह सब कर डाला तो 'चर्च' ने उन को मृत्यु का दण्ड दिया और चार्ल्स को लिखा गया कि वे लूथर को बन्दी कर के भेज देवें। सम्राट् ने इलेक्टर के पास इस आज्ञा को भेज दिया। इलेक्टर ने सोच विचार कर सुरक्षित प्रकार से लूथर को न्यायालय में भेज देना विचारा। 'डाइट' (एक प्रकार का न्यायालय) के सम्मुख लूथर का विचार हुआ। इस विचार में स्वयं चार्ल्स उपस्थित थे। इस में लूथर बहुत कुछ दबाये गये पर वे न दबे। उस समय लूथर ने कहा था "Here I stand, I can not do otherwise" अर्थात् मैं दृढ हूं, इस के विरुद्ध मैं कुछ भी नहीं कर सकता हूं। अन्त में सम्राट् को क्रोध आगया। उन्होंने कहा कि हम इस मामले का खातमा किये देते है। उन्होंने लूथर को २१ दिन का अवकाश दिया जिस में वे पुनः अपनी अवस्था

पर विचार कर लें। लूथर वहां से चल पड़े और रास्ते में उन्होंने अपनी दादी से साक्षात्कार किया। लूथर जब वहां से चले तब पांच आदमियों ने उन पर आक्रमण किया और लूथर को बन्दी कर लिया। समस्त जर्मनी में हाहाकार मच गया।

यह काम इलेक्टर का था। उन्होंने विचारा कि गुप्त रूप से लूथर यदि बन्दी कर लिये जांयगे तो वे बच जायगे नहीं तो उन का बचना कठिन है अतएव उन्होंने लूथर को बन्दी कर अपने दुर्ग में रख लिया। क़ैद की हालत में लूथर ने 'इञ्जील' का जर्मन भाषा में अनुवाद कर डाला। यद्यपि उन को यहा कष्ट न था तथापि स्वच्छन्दता भी न थी अतएव उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। पर उन्होने अपने स्वास्थ्य को सम्भाला। सन् १५२२ में उन को रिहाई हुई और मार्च मास में वे विटनबर्ग आगये। चलते समय लूथर ने अपने जाने के विषय में इलेक्टर को लिख दिया था। लूथर के लौटने से विटनबर्ग में खूब आनन्द मनाया गया।

यहां आ कर उन्हों ने बाइबिल का अनुवाद छपाया। इस के पश्चात् उन्हों ने तौरेत का अनुवाद किया। एक ओर उन के अनुवाद छपते थे और दूसरी ओर पोप उन को जलवातेथे। इतना होने पर भी उन की प्रतियां

खूब ही बिकी। इङ्गलैंड के आठवें हेनरी ने भी लूथर का प्रतिवाद किया और स्वय एक पुस्तक लिखी जिस में लूथर को बहुत फटकारा था। पोप ने प्रसन्न हो कर उन को 'Defender of the faith' (धर्म्म के रक्षक) की पदवी प्रदान की जो अद्यावधि इङ्गलैण्डेश्वर के नाम के साथ लगी चली आती है। लूथर ने राजा हेनरी की पुस्तक को देखा और देख कर उस का खण्डन लिखा जिस के उत्तर में राजा हेनरी ने उत्तर न लिख कर इलेक्टर को लूथर के सताने को लिखा।

जर्मनी में हलचल मची। लूथर के साथी जेलखाने में ठूसे जाने लगे। कोई २ तो जला भी दिये गये। लूथर को इस बात से बड़ा खेद हुआ पर वे राजाज्ञा के लिये क्या कर सकते थे। ११ जून सन् १५२३ को लूथर ने अपना विवाह किया। इन की पत्नी का नाम 'कोठा' था। पत्नी के सहवास से लूथर का समय बड़े आनन्द से व्यतीत होने लगा और ईश्वर की कृपा से एक ही वर्ष बाद योग्य दम्पती ने पुत्र रत्न प्राप्त किया। लूथर ने उस का नाम 'हैन्स' रक्खा। इसी बीच में लूथर बीमार पड़ गये और उन की बीमारी इतनी बढ़ी कि उन के जीवित रहने में सन्देह होने लगा। अन्त में एक दिन लूथर ने अपनी स्त्री से कहा 'प्राणप्रिये! ईश्वर की जो इच्छा

है वही होगा पर मुझे खेद इस बात का है कि कदाचित् मेरे पीछे लोग तुम्हें बड़ा दुःख देंगे।" इतना कह कर उन्हों ने अपने पुत्र को बुलवाया। पुत्र को चूम कर उन्हों ने कहा 'नादान बालक! मैं तुझ को ईश्वर के आश्रय पर छोड़ता हूं। वह तेरी सदैव रक्षा करेगा।' ऐसी बातें सुन कर इन की स्त्री भयभीत हो गई थी परन्तु धैर्य्य धारण कर उस ने कहा, "हृदयनाथ! यदि जगदीश्वर की यही इच्छा है तो क्या डर है। मै जहां तक समझती हूं आप का उस के साथ रहना अधिक उत्तम होगा, पर विचार एक बात का है कि बहुत से धार्म्मिक ईसाई अनाथ हो जायँगे। आप मेरी ओर ध्यान न दीजिये। ईश्वर सब मङ्गल ही करेगा।" ईश्वरेच्छा से लूथर थोड़े ही दिन में आरोग्य हो गये।

एक दिन लूथर एक बाग़ में टहल रहे थे। उन्हों ने एक छोटे से पक्षी को शब्द करते हुए देखा। उस को देख कर उन को ध्यान आया कि यह छोटा सा पक्षी भी कितनी ईश्वरीय शक्ति को प्रदर्शित करता है। यदि मनुष्य चाहे तो इन्हीं छोटी वस्तुओं द्वारा वह बहुत कुछ ईश्वर के सम्बन्ध में सीख सकता है। इन्हीं दिनों में अर्थात् सन् १५२४ में लूथर के मित्रों ने उन की कहावतों को ले कर एक पुस्तक बना डाली परन्तु पोपाज्ञा से इस को प्रायः स-

मस्त प्रतियां भस्मीभूत कर दी गईं पर १५१६ में एक मकान खोदते समय इस की एक प्रति मिल गई जिस से इस पुस्तक का अस्तित्व रह गया।

यूरोप में सुधार जारी रहा और लूथर उस में जी जान से काम करते रहे। पोप के अनुयायियों ने 'डाइट' की आज्ञा को यथासाध्य पूर्ण करने का यत्न किया परन्तु सुधारकों की प्रबल शक्ति के कारण वे सफलीभूत न हो सके। १५२६ ईसवी में चार्ल्स ने पुन: 'डाइट' सङ्गठित की। इस बार इस के सभापति बोहिमिया के राजा फर्डिनेण्ड थे। फर्डिनेण्ड ने प्रथम इस बात का यत्न किया कि दोनों पक्ष में सुलहनामा हो जाय पर यह न हो सका। इसी बीच में चार्ल्स और पोप में झगड़ा हो गया जिस का फल लूथर के लिये बहुत अच्छा हुआ। सन् १५२९ में लूथर ने 'सुधार' के ऊपर कुछ टिप्पणियां लिख डाली जो अत्यन्त उपयोगी समझी गईं। पोप ने जब इस के विषय में सुना तो उन को बड़ा भय हुआ अतएव उन्हों ने चार्ल्स से सन्धि कर मैत्रीभाव स्थापित किया। अब दोनों ने लूथर को पीस डालने का यत्न प्रारम्भ किया। मार्च में पुन: "डाइट" सङ्गठित हुई और अब की बार उस में यह स्थिर किया गया कि जो लूथर की शिक्षा का प्रचार करेगा उस को जेल में जाना पड़ेगा। यदि वह

इतने पर भी न मानेगा तो उस को मृत्यु का दण्ड दिया जायगा।

इस 'डाइट' ने यह भी नियम कर दिया कि प्रत्येक मनुष्य जो जिस धर्म्म का अनुयायी चला आता है उस को उसी पर दृढ़ रहना पड़ेगा। इस नियम से जर्मनी में बड़ी हलचल मच गई। चारों ओर से 'धार्म्मिक स्वतन्त्रता' का शब्द सुनाई देने लगा। उक्त नियम के विरुद्ध घोर आन्दोलन होने लगा। सुधार के अनुयायी 'प्रिन्स समूह' ने 'डाइट' की आज्ञा के विरुद्ध घोर प्रतिवाद किया। यहीं से 'प्रोटेस्टेण्ट' धर्म्म का जन्म हुआ। यही प्रतिवाद इस का जन्मदाता था। चार्ल्स ने इस के रोकने के यत्न के लिये 'प्रोटेस्टेण्ट' धर्म्म वालों को बुलवाया और उन को बहुत कुछ डराया धमकाया पर वह सब निरर्थक हुआ और अन्त में चार्ल्स चुप साध गये।

सन् १५२७ में लूथर फिर बीमार होगये और इस बार इस बीमारी ने सन् १५३७ तक उनका पीछा न छोड़ा। इलेक्टर ने उनसे साक्षात्कार किया और लूथर की दशा पर शोक प्रकट किया। लूथर ने कहा कि "अब जीने की आशा नहीं है अतएव मेरे पीछे आप मेरी स्त्री तथा बालकों की रक्षा कीजियेगा"। इस पर इलेक्टर ने कहा 'ईश्वर करे ऐसा न हो। यदि ऐसा हुआ भी तो तुम

इसके लिये चिन्ता न करना।' सन् १५४० के निकट लूथर बहुत ही कमजोर हो गये। इसके पश्चात् वे ५ वर्ष तक और जीवित रहे।

इस रोगावस्था में लूथर ने ईश्वर पर अटल विश्वास रक्खा था। मृत्युकाल से कुछ समय पूर्व वे विवाद मिटाने के लिए 'मेन्सफील्ड' गये थे पर वहां से सफलीभूत न हुए। वे दुबारा फिर गए पर फिर भी वहां कुछ फल न निकला। तीसरी बार रुग्णावस्था में वे पुन वहां गये। इस बार उन्हों ने विवाद को शान्त कर दिया। वहां से लौट कर वे अपनी जन्मभूमि को आये। उन की बीमारी बढ़ती ही गई। १६ फरवरी को उन की अवस्था अति शोचनीय हो गई और अन्त को द्वितीय दिवस इस महात्मा ने इस नश्वर देह को त्याग दिया। मृत्यु के समय उन्होंने कहा था "I pray Thee, Lord Jesus, receive my soul into Thy care Oh! Heavenly Father, although I leave this body and be taken away from this life I never the less know assuredly that I shall be with Thee forever" अर्थात् "प्रभु ईशु मसीह! मैं आप से प्रार्थना करता हूं कि आप मेरी आत्मा को अपनी निगहबानी में लीजिए। स्वर्गीय पिता! यद्यपि मैं इस शरीर को

छोड़ता हूं और इस जीवन से पृथक् होता हूं परन्तु मुझे पूर्ण आशा है कि मैं सदा के लिए आपके साथ रहूंगा।"

बड़े सम्मान के साथ लूथर का शव विटनबर्ग लाया गया। उन के शव के साथ मे इलेक्टर तथा मैन्सफील्ड के काउण्ट आदि अनेक प्रतिष्ठित पुरुष थे। बड़े समारोह के साथ उन का शव समाधिस्थ किया गया। कुछ दिनो के पश्चात् चार्ल्स भी वहा गये। चार्ल्स के साथियो ने कहा कि यह अच्छा होगा कि लूथर का शव निकाल कर जलाया जाय और उस की भस्म वायु में उड़ा दी जाय परन्तु सम्राट् ने कहा कि मैं मुर्दों से युद्ध नही करता हू। इतना कह कर वे वहा से चल दिये।

लूथर का जीवन उपदेशजनक है। मनुष्य उस से बहुत कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकता है। अन्धविश्वास को तिलाञ्जलि देना लूथर की जीवनी से खूब सीखा जा सकता है। सन्मार्ग पर अटल रहना उनके जीवन की सबसे बड़ी शिक्षा है। 'प्राण जाँय पै वचन न जाहीं' की शिक्षा लूथर ने दी है। आपत्काल में भी धैर्य का धारण करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। इस बात को लूथर ने अच्छी तरह से दिखलाया है।